RESEARCH REVIEW JOURNALS
Volume-02
Issue-03
March-2017

ISSN: 2455-3085 (Online)
RESEARCH REVIEW International Journal of Multidisciplinary
www.rrjournals.com

महाभारत में वर्णित अहिंसा का स्वरुप निरुपण

डॉ. सुदेव

असिस्टेंट प्रोफेसर, संस्कृत विभाग, पाँचमुड़ा महाविद्यालय, पाँचमुड़ा, बाँकुड़ा, पश्चिम बंगाल

सारांश-

'यम' शब्द[1] "यम उपरमे" धातु से बनता है । अतः[2] 'यम्' उन्हें कहते हैं जिनके अनुष्ठान के द्वारा इन्द्रियों को विषयों से पृथक् किया जाता है । इस प्रकार यम (Negative) निषेधात्मक है । दूसरे रूप में यम शब्द का अर्थ '**उपरमण का साधन**' अर्थात् जो हिंसादि निषिद्ध कर्मों से हटानेवाली हैं, वे यम कहलाते है ।[3] यम धातु का एक अर्थ नियमन भी है, निघन्टु के अनुसार '**यम्यते नियम्यते चित्तम् अनेन इति यमः।**' जिनसे चित्त का नियन्त्रण किया जाए'। शब्द कोष में यम शब्द के अर्थ इस प्रकार पाए जाते हैं जैसे- दमन,आत्म संयम,नियन्त्रण,मृत्यु का देवता,यमराज,निग्रह,शनि,सन्तान तथा अष्टङ्गयोग का एक अङ्ग।[4]

महाभारत में पाँच यमों का वर्णन कहीं भी एकत्रित नहीं मिलता,परन्तु प्रकरणानुसार यमों के स्वरूपों का ज्ञान प्राप्त होता है । महर्षि पतञ्जलि ने **"अहिंसासत्यास्तेयब्रह्मचर्यापरिग्रहायमाः"** अर्थात् अहिंसा,सत्य,अस्तेय,ब्रह्मचर्य तथा अपरिग्रह इन पाँच साधनों को यम संज्ञा दी है।[5] यह यम सर्वत्र,सर्वदा और सर्वथा करने योग्य,भूमि पर रहने वाले सब मनुष्यों के लिये हितकर एवं श्रेष्ठतम कर्तव्य है।[6]

परवर्ती काल में योग विषयक में यमों की मान्यता में भी विभेद पाया जाता है । हठयोग प्रदीपिका में दश प्रकार यमों को स्वीकारा है।[7] पाराशर संहिता में-

अहिंसा सत्यमस्तेयं ब्रह्मचर्यं क्षमा धृतिः।
दयाऽर्जवं मिताहारः शौचं चैव यमा दश।।

अहिंसा,सत्य,अस्तेय,ब्रह्मचर्य,क्षमा, धृति,दया,सरलता,मिताहार तथा पवित्रता इन दश को यम माना है।[8] **कूट-शब्द-** योग, अहिंसा, दमन,आत्मसंयम,नियन्त्रण, व्रत, धर्म, अभिद्रोह,प्राणी, तप,

पाँच यमों में 'अहिंसा' का प्रथम स्थान है,इसका लक्षण व्यास भाष्यकार 2/30 सूत्र पर देते है- "**तत्राहिंसा सर्वथा सर्वदा सर्वभूतानामनभिद्रोहः**" अर्थात् सदा और सभी जगाहों पर किसी भी प्राणी को,किसी भी प्रकार का कष्ट न देना,अहिंसा कहलाता है ।[9] याज्ञवल्क्य के मतानुसार "शरीर,मन और वाक्य द्वारा किसी भी प्राणी को क्लेश न पहुँचाना उसको योगीजन

[1] यम उपरमे (शान्त होना)(भ्वादि. परस्मैपद) + अप् प्रत्ययः (अष्टा. 3.3.63)

[2] यम्यन्ते उपरम्यन्ते निवर्त्यन्ते हिंसादिभ्य इन्द्रियाणि यैस्ते यमाः ।

[3] हिंसादिभ्यो निषिद्धकर्मभ्यो योगिनं यमयन्ति निवर्तयन्तीति यमाः । योग दर्शन- 2.30

[4] संस्कृत शब्दार्थ कौस्तुभ। पृ. 951

[5] पात. यो. सू. 2.30

[6] जातिदेशकालसमयानवच्छिन्नाः सार्वभौमा महाव्रतम्। पात. यो. 2.31

[7] अहिंसा सत्यमस्तेयं ब्रह्मचर्यं दयार्जवं। क्षमा धृतिर्मिताहारः शौचस्त्वेते यमादश।। हठयोग प्रदीपिका 1.17

[8] पाराशर संहिता।

[9] पात. यो. सू. 2.30 पर व्यास भाष्य।

© RRIJM 2015, All Rights Reserved

अहिंसा कहते हैं"[10] महर्षि दयानन्द अहिंसा का अर्थ किया है "सब प्रकार से , सब काल में,सब प्राणीयों के साथ बैर छोड़ के प्रेम-प्रीति से व्यवहार करना अहिंसा है"[11] इसके विपरीत महर्षि पतञ्जलि ने हिंसा तीन प्रकार की कही है,जो योग साधकों के लिए योग में विरोधी है। "**वितर्का हिंसादयः कृताकारितानुमोदिता लोभक्रोधमोहपूर्वका मृदुमध्याधिमात्रा दुःखाज्ञानानन्त फला इति प्रतिपक्षभावनम्"** कृता अर्थात् स्वयं हिंसा करना ,दुसरों से हिंसा करवाना कारिता है और अनुमोदिता अर्थात् दूसरे मनुष्य द्वारा की हुई हिंसा का समर्थन करना। ये सभी प्रकार हिंसा साधक को दुःख प्रदान करती है। अतः साधको को कभी भी किसी अवस्था में भी लोभ,मोह अथवा क्रोध में आकर किसी भी प्राणी को कष्ट नहीं पहुँचाना चाहिए।[12] व्यास जी को इस प्रकार स्पष्टीकरण इसलिए करना पड़ा क्योंकि कुछ मनुष्यों को यह भ्रम रहता है कि यदि वे स्वयं किसी का वध नहीं करेंगे तो उनको पाप नहीं लगेगा। यह धारणा केवल सामान्य व्यक्तियों में ही नहीं अपितु साधकों में भी देखी जाती है। उदाहरण रूप में बौद्ध भिक्षु स्वयं तो किसी प्राणी की हिंसा नहीं करते परन्तु यदि भिक्षा में मांस मिल जाय तो वह खा सकते हैं। इसके पीछे उनका यही तर्क है कि उन्होंने मांस के लिए स्वयं किसी प्राणी की हत्या नहीं की है। मनुस्मृति में इन सभी को हिंसा के अन्दर माना है-

अनुमन्ता विशस्ता च विहन्ता क्रयविक्रयी ।
संस्कर्ता चोपहर्त्ता च खादकश्चेति धातकाः ।।

अर्थात् मारने वाला,अनुमति देने वाला, समर्थन करने वाला, खरीदने वाला, बेचने वाला, पकाने वाला, परोसने वाला तथा खाने वाला इन सभी को हिंसक माना है[13] । इससे मनुस्मृति की हिंसा का क्षेत्र अति व्यापक प्रतीत होता है परन्तु पतञ्जलि के कृत, कारित तथा अनुमोदित भेदों में ही मनुस्मृति में निर्दिष्ट हिंसा के उक्त प्रकारों का समावेश हो जाता है। इस अहिंसा से अग्रिम जो चार सत्य, अस्तेय,ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह रूप यम है वे सब अहिंसा मूलक है[14] । अर्थात् अहिंसा ही उन सब का मूल है। उसी अहिंसा को सिद्ध करने के लिये ही उनका प्रतिपादन किया जाता है।

महाभारत में बहु स्थानों पर अहिंसा को परम धर्म कहा है।[15] आदि पर्व में डुण्डुभ अनुपम ओजवाले रुरु से यह बात कही कि ब्राह्मणों को कभी भी और कहीं भी किसी प्राणी की हिंसा नहीं करनी चाहिये क्योंकि ब्राह्मण स्वभाव से सरल स्वभाव का होता है, ऐसा वेदों का मानना है। वह ब्राह्मण वेद-वेदाङ्गों का ज्ञाता और समस्त भूतों को अभय दान देता है. अतः अहिंसा, सत्य,क्षमा और स्वाध्याय ये ब्राह्मण के उत्तम धर्म है।[16]

वन पर्व में मार्कण्डेय युधिष्ठिर को कहते हैं- अहिंसा और सत्य भाषण प्राणी मात्र के लिये हितकर होता है। अतः अहिंसा सबसे महान् धर्म है परन्तु वह सत्य में ही प्रतिष्ठित है तथा सत्य से ही श्रेष्ठजनों का सभी कार्य प्रारम्भ होते हैं।[17] आगे और भी श्रेष्ठ पुरुषों के कर्तव्य बतलाते हैं – "**सर्वभूतदयावन्तो अहिंसा निरताः सदा"** सदा समस्त प्राणीयों पर दया करना और अहिंसा धर्म के पालन में तत्पर रहना चाहिए।[18] क्योंकि एकमात्र अहिंसा ही सुख देनेवाली है।[19] योगी को विशेष ध्यान में रखना है

---

[10] कर्मणा मनसा वाचा सर्वभूतेषु सर्वदा । अक्लेश जननं प्रोक्तमहिंसात्वेन योगिभिः।। याज्ञवल्क्य

[11] ऋग्. भा. भूमिका (उपासना) पृ. 191

[12] पात. यो. सू. 2.34

[13] मनुस्मृति 5.15

[14] यम-नियम के प्रतिकुल आचरण से अहिंसा मलिन हो जाती है और इनके अनुकूल आचरण से अहिंसा में निखर पैदा दोता है । अतः यम नियमों को अहिंसामूलक कहा गया है । वै. योगामृतम्

[15] 'अहिंसा परमोधर्मः' महा आदि 11.13

[16] तस्मात् प्राणभृतः सर्वान् न हिंस्याद् ब्राह्मणः क्वाचित् वेदवेदाङ्ग विन्नाम सर्वभूताभयप्रदः। अहिंसा सत्यवचनं क्षमा चेति विनिश्चितम्। ब्राह्मणस्य परो धर्मो वेदानां धारणापि च।। महा. आदि 11.14,15,16

[17] अहिंसा सत्यवचनं सर्वभूतहितं परम्। अहिंसा परमो धर्मः स च सत्ये प्रतिष्ठितः।
सत्ये कृत्वा प्रतिष्ठां तु प्रवर्तन्ते प्रवृत्तयः। महा. वन. 207.74

[18] महा. वन. 207.84

© RRIJM 2015, All Rights Reserved

कि उनसे किसी प्राणी की हिंसा न हो, सबके साथ प्रीतिपूर्वक व्यवहार हो और इस दुर्लभ मानव चोला को पाकर किसी के साथ वैर न करें।[20] किन्तु भीष्म पर्व में श्रीकृष्ण जी अर्जुन को धर्म स्थापन के लिये युद्ध करना क्षत्रियों का कर्तव्य है, और उससे बचना हिंसा रूपी अधर्म में सहायक होना बताया है-

स्वधर्ममपि चावेक्ष्य न विकम्पितुमर्हसि।
धर्म्याद्धि युद्धाच्छ्रेयोऽन्यत् क्षत्रियस्य न विद्यते।।

अर्थात् स्वधर्म को समझकर भी तुझे भय करना चित्र नहीं है क्योंकि धर्मयुद्ध की अपेक्षा क्षत्रिय के लिए और कुछ अधिक श्रेयस्कर नहीं हो सकता। आगे और भी कहा हैं कि-

यदृच्छया चोपपन्नं स्वर्गद्वारमपावृतम्।
सुखिनः क्षत्रियाः पार्थ लभन्ते युद्धमीदृशम्।।

हे पार्थ! यों अपने आप प्राप्त हुआ और मानो स्वर्ग का द्वार ही खुल गया हो, ऐसा युद्ध तो भाग्यशाली क्षत्रियों को ही प्राप्त होता है।[21] अपने कर्तव्य कर्म को करते हुए प्राणियों की हिंसा न करना श्रेष्ठ धर्म माना है।[22]

श्रीकृष्ण जी अर्जुन को महर्षियों ने उत्तम धर्म का प्रवचन किस प्रकार किया ऐसा समझाते हुए कहते हैं कि-

यत्स्यादहिंसासंयुक्तं स धर्म इति निश्चयः।
अहिंसार्थाय भूतानां धर्म प्रवचनं कृतम्।।

अर्थात् सिद्धान्त यह है कि जिस कार्य में हिंसा न हो रही हो तथा किसी भी प्राणियों की हिंसा न होने पावे, वही श्रेष्ठ धर्म है।[23] हिंसा कार्य को उत्तम पुरुष द्वारा निन्दित एवं सबसे बड़ा पाप कहा गया है।[24] श्रीकृष्ण जी अर्जुन को तो यहाँ तक कह दिया कि-

प्राणिनामवधस्तात सर्वज्यायान् मतो मम।
अनृतां वा वदेद् वाचं न तु हिंस्यात् कथंचन।।

प्राणियों की हिंसा न करना ही सबसे श्रेष्ठ धर्म है। यदि किसी की प्राण रक्षा के लिये मिथ्या भाषण बोलना पड़े तो बोल दे, परन्तु उसकी हिंसा किसी तरह न होने दे।[25] शान्ति पर्व में भीष्म जी कहते हैं –**"अहिंसासकलो धर्मो हिंसाधर्मस्तथाहितः"** अहिंसा ही सम्पूर्ण धर्म है । हिंसा अधर्म है और अधर्म अहित कारक होता है।[26] प्राणियों की कभी भी हिंसा न हो, इसके लिये धर्म का उपदेश किया गया है, अतः जो अहिंसा से युक्त हो,वही धर्म है, ऐसा धर्मात्माओं का निश्चित मानना है।[27]

देवस्थान मुनि द्वारा युधिष्ठिर को उत्तम धर्म बताया गया है-

"अद्रोहेणैव भूतानां यो धर्मः स सतां मतः"

---

[19] तृप्तिरहिंसैका सुखावाह । महा. उद्योग 33.52

[20] न हिंस्यात् सर्वभूतानि मैत्रायणगतश्चरेत् । नेदं जीवितमासाद्य वैरं कुर्वीत केनचित् । महा. वन 213.34

[21] महा. भीष्म 26.31,32 (गीता 2.31,32)

[22] अहिंसा सर्वभूतेषु धर्मं ज्यायस्तरं विदुः। महा. द्रोण 192.38

[23] महा.वन 69.57

[24] (क) कर्तुं चाहं न शक्ष्यामि कर्म सद्भिर्विगर्हितम्। महा. उद्योग 9.30 , (ख) प्राणीनां त्वं वधं पार्थ धार्मिको नावबुध्यसे। महा. कर्ण 69.22

[25] महा. कर्ण. 69.23

[26] महा. शान्ति. 272.20

[27] अहिंसार्थाय भूतानां धर्मप्रवचनं कृतम्। यः स्यादहिंसासम्पृक्तः स धर्म इति निश्चयः।. महा. शान्ति 109.12

© RRIJM 2015, All Rights Reserved

अर्थात् प्राणीमात्र से द्रोह न करके जिस धर्म का पालन होता है वही धर्म सज्जन सम्मत है।[28] अद्रोह, सत्यवचन, संविभाग, धृति,क्षमा,कोमलता,धैर्य को स्वयंभुव मनु ने उत्तम धर्म कहा है।[29]

अतः भीष्म जी यहाँ तक कह दिया-

"अहिंसा परमो धर्मस्तथाहिंसा परं तपः।

अहिंसा परमं सत्यं यतो धर्मः प्रवर्तते।।"

अहिंसा परम धर्म है, परम तप है और परम सत्य है क्योंकि उसी से धर्म की प्रवृत्ति होती है[30]। अनुशासन पर्व में बृहस्पति ने युधिष्ठिर को अहिंसा महिमा वताते हैं- जो मानव अहिंसा धर्म का पालन करता है वह काम, क्रोध, लोभ, मोह इत्यादि से रहित सिद्धि को प्राप्त करता है। जो अपने सुख के लिए अहिंसक प्राणियों से द्रोह करता है, वह परलोक में सुखी नहीं होता तथा जो समस्त प्राणियों को अपने समान समझता है अर्थात् सबकी आत्मा को अपनी ही आत्मा समझता है एवं सब भूतों को समभाव से देखता है वह उत्तम गति को प्राप्त होता है। जो व्यवहार अपने को रुचिकर नहीं लगता, वह व्यवहार दूसरों के प्रति न करें यही धर्म का संक्षिप्त लक्षण है।[31]

भीष्म पितामह अहिंसा को चार प्रकार कहा है। मन, वाणी तथा कर्म से हिंसा न करना एवं मांस भक्षण न करना इन चार उपायों से अहिंसा धर्म का पालन होता है।[32] अहिंसा धर्म में ही सब धर्मो का समावेश हो जाता है,जैसे हाथी के पदचिह्न में सभी पदगामी प्राणियों के पदचिह्न समा जाता है।[33] अतः यह अहिंसा रूप धर्म सब धर्मो से उत्तम है। जो महात्मा इसका आचरण करते हैं,वे स्वर्गलोक को प्राप्त होते हैं।[34] इसलिये अहिंसा को बार-बार परम धर्म कहा गया है।[35] अहिंसा धर्म की प्रशंसा जितनी की जाय उतनी ही कम है। भीष्म पितामह इसकी प्रशंसा में कहते है-

अहिंसा परमो धर्मस्तथाहिंसा परो दमः। अहिंसा परमं दानमहिंसा परमं तपः।।
अहिंसा परमो यज्ञस्तथाहिंसा परं फलम्। अहिंसा परमं मित्रमहिंसापरमं सुखम्।।
सर्वयज्ञेषु वा दानं सर्वतीर्थेषु वाऽप्लुतम्। सर्वदानफलं वापि नैतत्तुल्यमहिंसया।।
अहिंस्रस्य तपोऽक्ष्यय्यमहिंस्रो यजते सदा। अहिंस्रः सर्वभूतानां यथा माता यथा पिता ।।
एतत् फलमहिंसाया भूयश्च कुरुपङ्गव। न हि शक्या गुणा वक्तुमपि वर्षशतैरपि ।।

अर्थात् अहिंसा ही परम धर्म है। यही परम संयम है। यही परम दान है। अहिंसा ही परम तपस्या है, परम यज्ञ है, परम फल है, परम मित्र है तथा अहिंसा ही परम सुख है। सम्पूर्ण यज्ञ में दिये गये दान, सभी तीर्थ स्थानों और सब प्रकार दान के फलों को मिलाकर भी उनका फल अहिंसा के तुल्य नहीं हो सकता। जो हिंसा नहीं करता, उसकी तपस्या अक्षय होती है। उसे निरन्तर यज्ञ करने पर फल प्राप्त होता है। इस प्रकार का अहिंसक पुरुष सब प्राणियों के माता-पिता के समान है. अहिंसा से उत्पन्न लाभों का वर्णन सौ वर्षों मे भी नहीं किया जा सकता।[36]

---

[28] महा. शान्ति. 21.10

[29] अद्रोहः सत्यवचनं संविभागो दया दमः। प्रजनः स्वेषु दारेषु मार्दवं हीरचापलम् ।।
एवं धर्मं प्रधानेष्टं मनुः स्वाम्यभुवोऽब्रवीत्। महा. शान्ति 21.11,12

[30] महा. अनुशासन 115.23

[31] हन्त निःश्रेयसं.....धर्मः कामादन्यः प्रवर्तते।। महा. अनुशासन 113.3-8

[32] चतुर्विधेयं निर्दिष्टा.....न भवत्यरिसूदन।। महा. अनुशासन. 114.4

[33] यथा नागपदे.....निर्दिष्टा धर्मतः पुरा।। महा. अनुशासन 114.6

[34] तदेतदुत्तमं.....नागपृष्ठे वसन्ति ते।। महा. अनुशासन 115.69

[35] अहिंसा परमो धर्म इति, महा. अनुशासन. अ.145 दाक्षिणात्य पृ.5951

[36] महा. अनुशासल 116.28-32

© RRIJM 2015, All Rights Reserved

जो हिंसा को छोड़कर सब प्राणीयों को अभयदान देता है, उसी को धर्म का फल प्राप्त होता है।[37] न तो अहिंसा से अधिक पुण्यदायक कोई और कार्य है और न ही हिंसा से बढ़कर अधिक पापदायक कोई कार्य है।[38] उमा-महेश्वर सम्वाद में कहा है कि-

अहिंसा परमो धर्मः ह्यहिंसा परमं सुखम् ।
अहिंसा धर्मशास्त्रेषु सर्वेषु परमं पदम् ।।

अर्थात् अहिंसा को परम सुखदायक घोषित किया गया है। यही परम पद है तथा यही परम धर्म है।[39] महेश्वर कहते है-

देवतातिथि शुश्रुशा सततं धर्मशीलता।
वेदाध्ययनयज्ञाश्च तपो दानं दमस्तथा।।
आचार्यगुरुशुश्रूषा तीर्थाभिगमनं तथा।
अहिंसाया वरोरोहे कलां नार्हन्ति षोडशीम्।।

हे वरारोहे! देवता और अतिथियों की सेवा, निरन्तर धर्म का आचरण, वेदाध्ययन, यज्ञ सम्पादन, तपश्चर्या, दान, इन्द्रिय संयम, आचार्यो की सेवा तथा तीर्थयात्रा ये सब अहिंसा धर्म की सोलहवीं कला के समान भी नहीं है।[40] अतः इस भूमणडल पर अपने आत्मा से बढ़कर कोई प्रिय वस्तु और नहीं है। इसलिए सब प्राणियों पर दया करें और सबको अपना आत्मा ही समझें।[41] हिंसा करने वाला व्यक्ति घोर अन्धेरा (नरक) को प्राप्त होता है।[42]

अतः महाभारतकार के विचार में मनुष्य को सदा-सर्वदा अहिंसा का ही पालन करना चाहिए। यह उपदेश जगह जगह प्राप्त होता है। निष्कर्ष रूप में कहा है कि अहिंसा ही श्रेष्ठ धर्म है तथा हिंसा को अधर्म का स्वरूप माना है।[43]

इस प्रकार उपर्युक्त विवेचन से हम यह निष्कर्ष पर कह सकते हैं कि महाभारत में बलपूर्वक हिंसा का निषेध और अहिंसा का आदेश दिया गया है। अतः ध्यानपूर्वक अहिंसा धर्म का पालन करना चाहिए। महाभारतकार को भी योगदर्शन सम्मत अहिंसा धर्म का पालन ही अभीष्ट है।

सन्दर्भ ग्रन्थ -

i. अष्टाध्यायी-महर्षि पाणिनि, 119,गुरुकुल गौतम नगर, नई दिल्ली-49
ii. अमरकोश- प. हरगोविन्द शास्त्री, वाराणसी
iii. उपनिषद्- शंकर भाष्य, 1-2 खण्ड, गीता प्रेस, गोरखपुर
iv. गीता- शंकर भाष्य, गीता प्रेस, गोरखपुर
v. गीता भाष्य- डॉ राधाकृष्णन्, चौखम्बा ओरियन्टालिया,जवाहर नगर, बंगलो रोड,दिल्ली-7
vi. निरुक्त- भाष्य. श्री चन्द्रमणि विद्यालंकार, आर्ष कन्या गुरुकुल,नरेला, दिल्ली-40
vii. पातञ्जल योग दर्शन- भाष्यकार राजवीर शास्त्री, आर्ष साहित्य प्रचार ट्रस्ट,दिल्ली-6
viii. पातञ्जल योग दर्शन – व्यास भाष्य. स्वामी हरिहरानन्द, मोती लाल बनारसी दास, दिल्ली-7
ix. महाभारत- स्वामी जगदीश्वरानन्द सरस्वती, विजय कुमार गोविन्दराम हासानन्द, नई सड़क, दिल्ली-6
x. महाभारत- गीता प्रेस, गोरखपुर
xi. महाभारत-सम्पादक दामोदर सातवलेकर,स्वाध्याय मण्डल,पारडी

---

[37] सर्वभूतेषु यः.....स वै धर्मेण युज्यते।। महा. अनुशासन 142.27

[38] अहिंसा परमो धर्मः हिंसा चाधर्मलक्षणा, महा. आश्वमेधि -43.21

[39] महा.अनुशासन. दाक्षिणात्य पाठ पृ. 5955

[40] महा. अनुशासन. अ. 145, दाक्षिणात्य पाठ. पृ. 5955

[41] नात्मनोऽस्ति प्रियतरः.....दयावानात्मवान् भवेत्।। महा. अनुशासन 116.22

[42] हिंसापराश्च ये .....वै निरयगामिनः।। महा. आश्वमे. 50.4

[43] अहिंसा परमो धर्म हिंसा चाधर्म लक्षणा।। महा. आश्वमेधिक. 43.21

© RRIJM 2015, All Rights Reserved

xii. महाभारत की समालोचना- सम्पादक दामोदर सातवलेकर, भारती भण्डार, लीडर प्रेस, इलाहाबाद, उत्तर प्रदेश

xiii. महाभारत मीमांसा- सी.वी.वैद्य, बुधवार पेठ,पूना

xiv. महाभारतम्- भारत भावदीय टीका श्री नीलकण्ठ सनातन शास्त्रम् प्रकाशन, नई दिल्ली

xv. मनुस्मृति-भाष्य. सुरेन्द्र कुमार, आर्ष साहित्य प्रचार ट्रस्ट, खारीबाबली,दिल्ली-6

xvi. योग शब्द कोश- सुभाष विद्यालंकार, प्रतिभा प्रकाशन, दिल्ली- 7

xvii. योग मीमांसा- राजवीर शास्त्री, आर्ष साहित्य प्रचार ट्रस्ट,दिल्ली-6

© RRIJM 2015, All Rights Reserved